

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 2 अध्याय 2: मुक्ति के दो प्रकार

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



भगवान् ब्रह्मा, भगवान् के ब्रह्माण्डीय रूप पर गहन ध्यानमग्न होकर, एक नए सृष्टि-चक्र के आरम्भ में सृष्टि का विस्मृत ज्ञान पुनः प्राप्त करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। मरणासन्न राजा परीक्षित को दिया जा रहा श्रीशुकदेव गोस्वामी का उपदेश बिना रुके आगे बढ़ता है। पिछले अध्याय में भगवान् के स्थूलतम विराट् रूप का वर्णन करने के पश्चात्, श्रीशुकदेव अब अन्तर्मुखी होते हैं। वे पहले यह दिखाते हैं कि किस प्रकार स्वयं सृष्टि के रचयिता भगवान् ब्रह्मा ने इसी एकाग्रता के द्वारा अपना विस्मृत ज्ञान पुनः प्राप्त किया था। फिर वे ध्यान का एक अधिक कोमल, अधिक आत्मीय विषय सिखाते हैं — भगवान् का सुन्दर चतुर्भुज व्यक्तिगत रूप, अँगूठे के बराबर आकार में, हृदय की गुहा में विराजमान। वहाँ से यह अध्याय सचेत मृत्यु की सूक्ष्म प्रक्रिया की ओर बढ़ता है — किस प्रकार योगी शरीर के सूक्ष्म केन्द्रों से होकर प्राण-वायु को ऊपर की ओर खींचता है — और अन्त में मुक्त आत्मा के लिए खुले दो मार्गों के भव्य वर्णन के साथ समाप्त होता है — उच्च लोकों में क्रमिक आरोहण, अथवा भगवान् में प्रत्यक्ष, तत्काल लय।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 2 (द्वितीय स्कन्ध)
- अध्याय: 2 (द्वितीय अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: भगवान् के स्थूल तथा सूक्ष्म रूपों का ध्यान, तथा मुक्ति के दो मार्ग — क्रममुक्ति अर्थात् क्रमिक मुक्ति, और सद्योमुक्ति अर्थात् तात्कालिक मुक्ति
- मुख्य वक्ता: श्रीसुक (श्रीशुकदेव गोस्वामी), अपनी अखण्ड कथा जारी रखते हुए
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित, और उनके माध्यम से नैमिषारण्य के ऋषिगण
- मुख्य स्थल: गंगा का तट, जहाँ परीक्षित अपने अन्तिम दिनों में उपवास पर बैठे हैं
- केन्द्रीय विषय: ध्यान के द्वारा ब्रह्मा का ज्ञान पुनः प्राप्ति का उदाहरण; भगवान् के चतुर्भुज व्यक्तिगत रूप को एकाग्रता का विषय बनाना; सचेत रूप से शरीर त्यागने की योग-विधि; तथा मुक्ति के दो शाश्वत मार्ग, क्रममुक्ति और सद्योमुक्ति
- मुख्य श्लोक-परास: स्कन्ध 2, अध्याय 2, श्लोक 1-37
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

बिना रुके आगे बढ़ती कथा

पिछले अध्याय के विपरीत, जो राजा परीक्षित के इस प्रश्न के साथ समाप्त हुआ था कि एकाग्रता किस प्रकार तथा किस वस्तु पर धारण की जाए, इस अध्याय में राजा की ओर से कोई प्रश्न नहीं आता। श्रीशुकदेव मानो अपनी ही शिक्षा के प्रवाह में बहते हुए, श्लोक-दर-श्लोक बोलते चले जाते हैं। विराट् पुरुष — भगवान् के स्थूल ब्रह्माण्डीय शरीर — का वर्णन अभी-अभी समाप्त करने के पश्चात्, वे अब यह प्रमाण देते हैं कि एकाग्रता की यह विधि वास्तव में कार्य करती है, और सृष्टि की सबसे महान् सत्ता के लिए भी करती है।

ब्रह्मा का विस्मृत ज्ञान, पुनः प्राप्त

श्रीशुकदेव एक विलक्षण उदाहरण से आरम्भ करते हैं। एक नए सृष्टि-चक्र के आरम्भ में, स्वयंभू भगवान् ब्रह्मा को यह ज्ञात हुआ कि उनके पूर्व के प्रलय-काल में सृष्टि करने की उनकी स्मृति लुप्त हो गई थी। ठीक इसी प्रकार की एकाग्रता के द्वारा — भगवान् के रूप पर स्थिर ध्यान से — ब्रह्मा ने अपना खोया हुआ ज्ञान पुनः प्राप्त किया, और अचूक दृष्टि प्राप्त कर, सृष्टि को ठीक उसी रूप में पुनः रच दिया जैसी वह पहले थी। यह शिक्षा यहाँ जान-बूझकर रखी गई है — यदि भगवान् पर एकाग्रता स्वयं ब्रह्मा को सृष्टि-रचना का विस्मृत कौशल लौटा सकती है, तो यह किसी साधारण आत्मा के भगवान् के साथ विस्मृत सम्बन्ध को भी अवश्य ही पुनः स्थापित कर सकती है।

इसके बाद श्रीशुकदेव वेदों के मोहक वचनों के प्रति सावधान करते हैं। उनका कहना है कि स्वर्गिक फलों का वर्णन मन को ऐसे नामों और लोकों की ओर मोड़ता है जो अन्ततः कोई स्थायी सुख नहीं देते — आत्मा उनमें स्वप्न की भाँति भटकती रहती है, सदा एक ऐसे सुख की आशा में जो उसे कभी वास्तव में नहीं मिलता। उनका समाधान अत्यन्त सरल है — संसार की वस्तुओं से सम्बन्ध केवल शरीर-निर्वाह की आवश्यकता तक ही रखा जाए, और जो भाग्य से पहले ही सुलभ नहीं है, उसके लिए कभी प्रयत्न न किया जाए।

लगभग कुछ भी न चाहने की स्वतन्त्रता

आगे भागवत के सबसे सजीव तथा शान्त रूप से क्रान्तिकारी अंशों में से एक आता है — प्रश्नों की एक शृंखला जो, एक-एक करके, उन सुविधाओं को हटाती है जिन्हें अधिकांश लोग आवश्यकता मानते हैं। जब पृथ्वी स्वयं लेटने के लिए उपलब्ध है, तो शय्या से क्या लाभ? जब प्रकृति ने भुजाएँ दी हैं, तो तकिए की क्या आवश्यकता? जब हथेलियों में कुछ भी धामा जा सकता है, तो थाली-कटोरों का क्या प्रयोजन? जब चारों दिशाएँ तथा वृक्षों की छाल शरीर ढकने के लिए उपलब्ध हैं, तो रेशमी वस्त्रों की क्या लालसा?

श्रीशुकदेव इस बिन्दु को और आगे बढ़ाते हैं — क्या मार्ग पर त्याग हुआ चिथड़े नहीं पड़े रहते? क्या वृक्ष, जो केवल दूसरों के पालन के लिए ही जीते हैं, कभी अपना फल देने से इनकार करते हैं? क्या प्यासे के लिए नदियाँ सूख गई हैं, अथवा किसी शरण खोजने वाले के लिए पर्वत-गुफाएँ बन्द हो गई हैं? और, सबसे बढ़कर, क्या श्रीहरि कभी अपनी शरण में आने वाले को सुरक्षा देने से इनकार करते हैं? यदि यह सब सत्य नहीं है, तो विवेकी पुरुष को धन के अहंकार में अन्धे धनवानों के द्वार पर भिक्षा क्यों माँगनी चाहिए? इस निश्चय पर हृदय को स्थिर कर, मनुष्य को अपने भीतर विराजमान उस नित्य भगवान् की, प्रिय आत्मा तथा स्वयंसिद्ध सत्य के रूप में, उपासना करनी चाहिए — क्योंकि इसी उपासना से अज्ञान से बोया गया बार-बार जन्म-मृत्यु का बीज अंकुरित होना बन्द हो जाता है। श्रीशुकदेव पूछते हैं — पशु के अतिरिक्त और कौन ऐसा है जो दूसरों को अपने ही पूर्व-कर्मों के फल भोगते हुए इस संसार की नारकीय नदी में डूबते देखकर भी, परमेश्वर के स्मरण के स्थान पर इन्द्रिय-सुख को ही चुने?

[चित्र 1: images/sbw-c2c02-01-minimalist-ascetic.jpg — यहाँ लगाएँ]

भगवान् के व्यक्तिगत रूप का हृदय में ध्यान

मन को अनावश्यक इच्छाओं से मुक्त करने के पश्चात्, श्रीशुकदेव अब ध्यान का एक अधिक कोमल तथा अधिक आत्मीय विषय प्रस्तुत करते हैं — प्रथम अध्याय में वर्णित उस विशाल ब्रह्माण्डीय शरीर की तुलना में। कुछ साधक, वे कहते हैं, भगवान् पर मन स्थिर करते हैं जैसे वे उनके अपने हृदय की गुहा में विराजमान हों — अँगूठे से बड़ा न होने वाला रूप, चार भुजाओं से युक्त, कमल, चक्र, शंख तथा गदा धारण किए हुए।

केचित् स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे
प्रादेशमात्रं पुरुषं वसन्तम् ।
चतुर्भुजं कञ्जरथाङ्गशङ्ख-
गदाधरं धारणया स्मरन्ति ॥ ८ ॥

*kecit sva-dehāntar-hṛdayāvakāśe prādeśa-mātraṁ puruṣaṁ vasantam catur-bhujam kañja-
rathāṅga-śaṅkha- gadā-dharaṁ dhāraṇayā smaranti*

अर्थ: कुछ साधक, एकाग्रता के द्वारा, अपने ही हृदय की गुहा में विराजमान उस भगवान् का स्मरण करते हैं, जो अँगूठे के बराबर आकार के, चतुर्भुज, तथा कमल, चक्र, शंख एवं गदा धारण किए हुए हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 2, श्लोक 8)

श्रीशुकदेव इस रूप का वर्णन स्पष्ट कोमलता के साथ करते हैं — प्रसन्न मुखमण्डल, पूर्ण विकसित कमल के समान नेत्र, कदम्ब-पुष्प के पराग के समान पीला वस्त्र, बहुमूल्य रत्नों से जड़ित स्वर्ण-भुजबन्द, मुकुट, तथा देदीप्यमान कर्ण-आभूषण। उनके कमल-सम कोमल चरण योगियों के हृदय-कमल के केन्द्र में योगिजनों द्वारा प्रतिष्ठित किए जाते हैं। उनके बाएँ वक्षःस्थल के ऊपर एक स्वर्ण-रेखा देवी लक्ष्मी की उपस्थिति का प्रतीक है; उनके कण्ठ में प्रसिद्ध कौस्तुभ-मणि लटकती है; उनके वक्ष को अमलान वन-पुष्पों की माला ढकती है, और रत्न-जड़ित करधनी, अँगूठियाँ, कड़े तथा भुजबन्द इस चित्र को पूर्ण करते हैं — उनका मुखमण्डल घुँघराले, श्याम केशों से सुशोभित एक निरन्तर मुस्कान से आलोकित रहता है। अपनी भौंहों के संचालन तथा अपनी उष्ण दृष्टि के द्वारा, वे उस भक्त पर अपनी कृपा उड़ेलते हैं जो इस रूप को तब तक निहारता रहता है जब तक मन ध्यान में दृढ़ता से स्थिर न हो जाए।

यह विधि धैर्यपूर्ण तथा व्यवस्थित है — भगवान् के प्रत्येक अंग की, चरणों से लेकर मुस्कुराते मुख तक, क्रमशः कल्पना कीजिए, बुद्धि निर्मल होने के साथ मन को स्थिर होने दीजिए, और एक अंग स्पष्ट रूप से प्रकट होने पर ही अगले अंग की ओर बढ़िए। जब तक भक्ति के द्वारा मन इस सर्वसाक्षी भगवान् पर स्थिर न हो जाए, साधक को अपने दैनिक उपासना के पश्चात् पिछले अध्याय में वर्णित उस स्थूलतर ब्रह्माण्डीय रूप पर भी एकाग्रता जारी रखनी चाहिए — व्यक्तिगत तथा ब्रह्माण्डीय, दोनों रूप मानो एक ही सीढ़ी के दो पायदान हैं।

[चित्र 2: images/sbw-c2c02-02-four-armed-form-heart.jpg — यहाँ लगाएँ]

शरीर कैसे त्यागें: योग-विधि

अब अध्याय एक चौंका देने वाली व्यावहारिक बात की ओर मुड़ता है — मृत्यु के समय सचेत रूप से शरीर त्यागने के सटीक निर्देश। जब वह क्षण निकट आए, साधक को समय अथवा स्थान को लेकर मन में चिन्ता नहीं होने देनी चाहिए। स्थिर, सुखद आसन में बैठकर, श्वास को नियन्त्रित तथा इन्द्रियों को मन के वश में रखकर, साधक शुद्ध बुद्धि के द्वारा बुद्धि को क्षेत्रज्ञ — शरीर के भीतर की चेतन-सत्ता — में विलीन करता है, और फिर क्षेत्रज्ञ को स्वयं परमात्मा में विलीन कर, समस्त क्रिया त्यागकर परम शान्ति में लीन हो जाता है। इस लीन अवस्था में, स्वयं काल — देवताओं का भी शासक — शक्तिहीन हो जाता है; न सत्त्व रहता है, न रजस्, न तमस्, न अहंकार, न महत्तत्त्व — केवल योगी का हृदय, क्षण-प्रतिक्षण, भगवान् विष्णु के उस आराध्य रूप को आलिंगन में बाँधे रहता है जिसे शास्त्र एकमत होकर उनकी परम सत्ता घोषित करते हैं।

जिस योगी की इन्द्रिय-सुख की लालसा पूर्णतः शान्त हो चुकी हो, श्रीशुकदेव उसके लिए शरीर त्यागने की प्रक्रिया बताते हैं — अपनी एड़ी को गुदा पर दबाकर बैठकर, प्राण-वायु को छह रहस्यमय केन्द्रों से होकर ऊपर की ओर खींचना। नाभि के मणिपूरक चक्र से यह वायु हृदय के अनाहत चक्र में उठती है; वहाँ से, उदान-वायु के मार्ग का अनुसरण करते हुए, यह वक्ष के ऊपर स्थित विशुद्धि चक्र तक पहुँचाई जाती है और धीरे-धीरे तालु-मूल तक धकेली जाती है। शरीर के सातों द्वार बन्द कर, प्राण-वायु को तालु-मूल से भौंहों के मध्य स्थित आज्ञा-चक्र तक ले जाया जाता है। जिस योगी को उच्च लोकों में जाने की इच्छा न हो, वह वहाँ अपनी दृष्टि लक्ष्य पर स्थिर कर कुछ काल रुक सकता है; परन्तु यदि उसे भगवान् के साथ ऐक्य चाहिए, तो वह वायु को मस्तक के शिखर स्थित सहस्रार में उठाकर, शिखर को भेदकर, शरीर तथा इन्द्रियों को पूर्णतः त्याग देता है।

[चित्र 3: images/sbw-c2c02-03-yogi-subtle-body-ascent.jpg — यहाँ लगाएँ]

दो मार्गः क्रममुक्ति और सद्योमुक्ति

श्रीशुकदेव अब उस योगी का वर्णन करते हैं जो, तत्काल भगवत्-ऐक्य की अपेक्षा, पहले ब्रह्मलोक — ब्रह्मा का अपना धाम — जाना चाहता है, आठ सिद्धियाँ प्राप्त कर आकाश में विचरण करने वाले सिद्धगणों के साथ रहने की इच्छा रखते हुए। ऐसा योगी देदीप्यमान सुषुम्ना नाड़ी के मार्ग से शरीर त्यागता है, पहले अग्नि-देव वैश्वानर के धाम को, फिर उससे ऊँचे भगवान् विष्णु द्वारा अधिष्ठित, डॉल्फिन के आकार के तारा-मण्डल को पार करता है। इससे भी आगे — जिसे श्रीशुकदेव ब्रह्माण्ड के महान् चक्र की नाभि के समान बताते हैं — योगी अपने सूक्ष्म, शुद्ध शरीर में अकेला महर्लोक तक पहुँचता है, जो एक सम्पूर्ण कल्प — ब्रह्मा का एक दिन — तक जीवित रहने वाले देवताओं का निवास है।

जब वह कल्प समाप्त होता है और योगी भगवान् अनन्त के मुख से निकलने वाली अग्नि द्वारा नीचे के सम्पूर्ण जगत् को भस्म होते देखता है, तो वह और ऊँचे, ब्रह्मलोक तक उठता है — श्रेष्ठतम सिद्धों के विमानों का लोक, जो ब्रह्मा के अपने जीवन-काल — दो परार्धों — तक स्थायी रहता है। उस लोक में न शोक है, न वृद्धावस्था, न मृत्यु; वहाँ अनुभव होने वाला एकमात्र दुःख उन आत्माओं के प्रति करुणा से उत्पन्न होता है जो, इस ध्यान-विधि के ज्ञान से रहित, जन्म-मृत्यु के अन्तहीन चक्र में बँधी रहती हैं।

अन्तिम प्रलय में, इस श्रेष्ठ योगी का सूक्ष्म शरीर भी पहले पृथ्वी में समाहित होता है, फिर क्रमशः जल, अग्नि, वायु तथा आकाश के आवरणों में प्रवेश करता है — पंच-तत्त्व प्रत्येक इन्द्रिय के माध्यम से अपने सूक्ष्म मूल में लौट जाते हैं। वहाँ से योगी अहंकार में प्रवेश करता है, स्थूल तत्त्वों को तामस अहंकार में, इन्द्रियों को राजस अहंकार में, तथा मन को सात्त्विक अहंकार में विलीन करता है, और फिर उसी विसर्जन-प्रक्रिया द्वारा महत्तत्त्व में तथा अन्ततः प्रकृति में लौटता है, जहाँ तीनों गुण अपने मूल स्रोत में लीन हो जाते हैं। जब अन्तिम प्रलय में प्रकृति भी भगवान् में विलीन होती है, तब आनन्दमय हो चुका योगी उसी शान्त, आनन्दमय ईश्वर में लीन हो जाता है — और, श्रीशुकदेव स्पष्ट रूप से परीक्षित से कहते हैं, इस भौतिक जगत् में फिर कभी नहीं लौटता।

[चित्र 4: images/sbw-c2c02-04-two-paths-brahmaloka.jpg — यहाँ लगाएँ]

श्रीशुकदेव यह कहकर निष्कर्ष देते हैं कि ये दोनों मार्ग वेदों द्वारा बताए गए वे दो शाश्वत मार्ग हैं जिनके विषय में परीक्षित ने पूछा था — वही मार्ग जो सृष्टि के आरम्भ में भगवान् वासुदेव ने स्वयं ब्रह्मा को, जब ब्रह्मा ने उनकी उपासना कर उनसे प्रश्न पूछा था, बताए थे। किन्तु श्रीशुकदेव इस विषय को दो समान विकल्पों के बीच अनिर्णीत नहीं छोड़ते।

न ह्यतोऽन्यः शिवः पन्था
विशतः संसृताविह ।
वासुदेवे भगवति
भक्तियोगो यतो भवेत् ॥ ३३ ॥

na hy ato 'nyaḥ śivaḥ panthā viśataḥ saṁsṛtāv iha vāsudeve bhagavati bhakti-yogo yato bhavet

अर्थ: संसार के इस भँवर में फँसी आत्मा के लिए भगवान् वासुदेव के प्रति प्रेमाभक्ति से बढ़कर कोई मंगलमय मार्ग नहीं है। (स्कन्ध 2, अध्याय 2, श्लोक 33)

स्वयं ब्रह्मा भी वेदों का तीन बार गहन अध्ययन करने के पश्चात् इसी निष्कर्ष पर पहुँचे थे — कि श्रीकृष्ण, विश्व-आत्मा, के प्रति अनन्य भक्ति ही सर्वोच्च पुण्य है।

सुनो, कीर्तन करो, स्मरण करो

अध्याय के अन्तिम श्लोक उसी विषय पर लौटते हैं जिससे श्रीशुकदेव ने अपने सम्पूर्ण उपदेश का आरम्भ प्रथम अध्याय में किया था — भगवान् की कथा-श्रवण का परम महत्त्व। श्रीहरि ही, वे घोषित करते हैं, समस्त प्राणियों तथा अप्राणियों में उनकी सच्ची आत्मा के रूप में विराजमान हैं; हमारी बुद्धि तथा अन्य समस्त शक्तियाँ केवल उसी सर्वसाक्षी की ओर संकेत करने वाले प्रमाण-मात्र हैं। इसलिए, हर परिस्थिति में तथा अपने सम्पूर्ण अस्तित्व से, मनुष्य को सदैव भगवान् को ही सुनना, कीर्तन करना तथा उन्हीं का चिन्तन करना चाहिए।

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां
कथामृतं श्रवणपुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं
व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम् ॥ ३७ ॥

pibanti ye bhagavata ātmanaḥ satām kathāmṛtaṁ śravaṇa-puṭeṣu sambhṛtam punanti te viṣaya-vidūṣitāśayaṁ vrajanti tac-caraṇa-saroruhāntikam

अर्थ: जो लोग अपने कानों के प्यालों से, सन्त-पुरुषों द्वारा उँडेली गई भगवान् — विश्व-आत्मा — की अमृत-सदृश कथाओं का पान करते हैं, वे इन्द्रिय-भोग से दूषित अपने हृदय को शुद्ध कर, उनके चरण-कमलों के समीप पहुँच जाते हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 2, श्लोक 37)

इस श्लोक के साथ अध्याय का समापन होता है। कोलोफन में कहा गया है — “इस प्रकार ‘भगवान् के दिव्य रूप का वर्णन’ नामक इस द्वितीय अध्याय की समाप्ति होती है, इस महान् एवं गौरवशाली भागवत-पुराण में, जिसे परमहंस-संहिता भी कहा जाता है।”

[चित्र 5: images/sbw-c2c02-05-devotee-hearing-stories.jpg — यहाँ लगाएँ]

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. एकाग्रता वास्तव में खोई हुई वस्तु को पुनः प्राप्त कराती है। स्वयं ब्रह्मा, सृष्टि-कला भूलकर, भगवान् पर ध्यान के द्वारा उसे पूर्णतः पुनः प्राप्त करते हैं — यह प्रमाण कि यह मार्ग वास्तव में कार्य करता है (श्लोक 1-2)।
2. सच्ची सुरक्षा को लगभग कुछ भी नहीं चाहिए। पृथ्वी, वृक्ष, नदियाँ तथा पर्वत-गुफाएँ पहले से ही वह सब कुछ देती हैं जो शरीर को चाहिए; अनावश्यक संचय केवल अनावश्यक श्रम को आमन्त्रित करता है (श्लोक 3-7)।
3. भगवान् को आत्मीय रूप से भी, न केवल ब्रह्माण्डीय रूप से, जाना जा सकता है। जहाँ प्रथम अध्याय ने विशाल विराट् रूप पर ध्यान सिखाया, वहीं यह अध्याय अपने ही हृदय में अँगूठे के बराबर विराजमान कोमल चतुर्भुज रूप प्रस्तुत करता है (श्लोक 8-14)।
4. सचेत रूप से मृत्यु को प्राप्त करना एक सीखने योग्य साधना है। श्रीशुकदेव सटीक चरण बताते हैं — आसन, श्वास, तथा शरीर के छह केन्द्रों से होकर प्राण-वायु का ऊर्ध्वगमन — जिनके द्वारा योगी पूर्ण सचेतनता के साथ शरीर त्याग सकता है (श्लोक 15-21)।
5. दो मार्ग संसार-बन्धन से परे ले जाते हैं, परन्तु भक्ति सबसे सुनिश्चित है। क्रममुक्ति क्रमशः महर्लोक तथा ब्रह्मलोक से होते हुए अन्तिम लय तक पहुँचती है; फिर भी श्रीशुकदेव आग्रह करते हैं कि संसार-चक्र में फँसी आत्मा के लिए भगवान् वासुदेव की भक्ति ही कल्याणकारी मार्ग है (श्लोक 22-34)।
6. भगवान् की कथाएँ सुनना हृदय को शुद्ध करता है। अध्याय ठीक वहीं समाप्त होता है जहाँ से सम्पूर्ण उपदेश आरम्भ हुआ था — भगवान् की महिमा को सुनने तथा कीर्तन करने की सरल, सुलभ साधना के साथ (श्लोक 35-37)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के प्रवाह में एक शान्त सन्तुलन छिपा है। यह ब्रह्मा से आरम्भ होता है, सृष्टि की सबसे महान् सत्ता से, और समाप्त होता है एक साधारण श्रोता से जो केवल अपने कानों से एक कथा का पान कर रहा है। इनके बीच, श्रीशुकदेव यह दिखाते हैं कि जिस साधना ने ब्रह्मा को सम्पूर्ण सृष्टि पुनः रचने में सक्षम किया, वही साधना कोई भी व्यक्ति कर सकता है, यदि वह शान्त बैठकर, सम धीरे-धीरे श्वास लेकर, मन को स्थिर होने दे — पहले भगवान् के विशाल ब्रह्माण्डीय शरीर पर, फिर हृदय में विराजमान उनके उस आत्मीय रूप पर। चक्रों तथा सूक्ष्म आरोहण का यह विस्तृत वर्णन तकनीकी, यहाँ तक कि दूरस्थ, प्रतीत हो सकता है, फिर भी इसका उद्देश्य सरल है — यह दिखाना कि स्वयं मृत्यु भी भ्रम का क्षण नहीं, अपितु सम्पूर्ण जीवन का सबसे सचेत कार्य बन सकती है, यदि मन ने पहले ही यह जान लिया हो कि कहाँ स्थिर होना है। और यदि यह तकनीकी मार्ग किसी प्रारम्भिक साधक के लिए दूर प्रतीत हो, तो श्रीशुकदेव अन्त में द्वार पूर्णतः खुला छोड़ देते हैं — भगवान् की कथाओं को सुनना, कीर्तन करना तथा स्मरण करना ही इन्द्रिय-सुख से मलिन हुए हृदय को शुद्ध करने के लिए पर्याप्त है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज कुछ शान्त क्षण निकालिए। सुखपूर्वक बैठिए, श्वास को स्थिर होने दीजिए, तथा श्रीशुकदेव द्वारा वर्णित उस लघु, कोमल छवि का स्मरण कीजिए — भगवान् आपके अपने हृदय की गुहा में विराजमान, अँगूठे से बड़े नहीं, उनका मुखमण्डल कोमल तथा मुस्कुराता हुआ। आरम्भ करने के लिए इससे अधिक कुछ भी आवश्यक नहीं है। मृदुतापूर्वक पवित्र नाम — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” — का उच्चारण कीजिए, और उस

शान्त, अन्तर्मुखी दृष्टि को आज का अपना अर्पण बनने दीजिए, ठीक वैसे ही जैसे यह अध्याय सिखाता है — सुनना, कीर्तन करना तथा स्मरण करना।

उपसंहार

द्वितीय स्कन्ध का द्वितीय अध्याय श्रीशुकदेव के उपदेश को ब्रह्माण्डीय रूप की विशालता से आगे बढ़ाकर हृदय की आत्मीयता तथा मरणासन्न आत्मा के अन्तिम क्षणों की सूक्ष्मता तक ले जाता है। ब्रह्मा का अपना उदाहरण यह सिद्ध करता है कि एकाग्रता वास्तव में विस्मृति द्वारा छिनी गई वस्तु को लौटा देती है। अनावश्यक इच्छाओं से मुक्त जीवन अपने भीतर विराजमान भगवान् में विश्राम करने के लिए स्वतन्त्र हो जाता है। सचेत रूप से शरीर त्यागने की विधि यह दिखाती है कि मृत्यु को भी भय के स्थान पर अनुशासन के साथ स्वीकार किया जा सकता है। और जब श्रीशुकदेव क्रमिक मुक्ति के भव्य मार्ग को सबसे सरल मार्ग — भगवान् वासुदेव की भक्ति — के साथ रखते हैं, तब वे यह स्पष्ट कर देते हैं कि वे किसे अनुशंसित करते हैं। सृष्टि की सबसे महान् सत्ता से आरम्भ हुआ यह अध्याय सबसे कोमल शिक्षा के साथ समाप्त होता है — केवल सुनो, कीर्तन करो, तथा स्मरण करो, और उस स्मरण को हृदय शुद्ध करने दो।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), द्वितीय स्कन्ध, द्वितीय अध्याय, पृष्ठ 89–95।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी भी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका की प्रतिकृति नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता अथवा समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-2-adhyay-2-sthool-sukshma-roop-do-mukti.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट